योजना आयोग की समस्या एवं नीति आयोग के गठन का विश्लेषणात्मक अध्ययन।

पुष्पांजलि कुमारी*

भारत में ब्रिटिश शासन के अंतर्गत सबसे पहले 1930 ई0 में बुनियादी आर्थिक योजनायें बनाने का कार्य शुरू हुआ। भारत की औपनिवेशिक सरकार ने औपचारिक रूप से एक कार्य योजना बोर्ड का गठन भी किया जिसने 1944 से 1946 तक कार्य किया। निजी उद्योगपतियों और अर्थशास्त्रियों ने 1944 में कम से कम तीन विकास योजनायें बनाई थी। स्वतंत्रता के बाद भारत ने योजना बनाने का एक औपचारिक मॉडल अपनाया और इसके तहत योजना आयोग जो सीधे भारत के प्रधानमंत्री को रिपोर्ट करता था, का गठन 15 मार्च 1950 ई. को प्रधान मंत्री जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में किया गया। इस आयोग की घोषणा वित मंत्री जॉन मथाई द्वारा प्रस्तुत आम बजट (1950–1951) में की गई थी।[1]

इसके उदभव की तलाश भारत के संविधान के राज्य के नीति निदेशक सिद्धांतों में की जा सकती है। (भाग–IV, अनुच्छेद 36–51)। सन 1950 में जिस मंत्रिमंडल के प्रस्ताव से योजना आयोग का गठन किया गया था, उसी में इसके कार्यो का भी उल्लेख किया गया, जिसके अनुसार योजना आयोग के निम्न चार कार्य तय किए गए:– 1. योजना निर्माण 2. संसाधन की व्यवस्था
3. योजना कार्यान्वयन 4. योजना समीक्षा

दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002–2007) को लागू करते समय तात्कालीन केन्द्र सरकार (एनडीए) द्वारा योजना आयोग को दो अतिरिक्त कार्य सौंपे गए थे।
5. आर्थिक सुधारों के परिप्रेक्ष्य में योजना कार्यान्वयन तथा
6. विभिन्न केन्द्रीय मंत्रालयों की प्रगति का प्रबोधन।

वर्ष 2002 में सौंपे गए उपरोक्त दो नये कार्यो ने योजना आयोग के महत्व का अत्यधिक विस्तार किया। इन कार्यो ने एक गैर संवैधानिक निकाय को संवैधानिक क्षेत्रों की निगरानी (प्रबोधन) करने का कार्य सौंपा, जिससे इसकी शक्ति में और विस्तार हुआ।[2] हालाकि, योजना आयोग का गठन मूल रूप से सलाहकार की भूमिका में स्टाफ एजेंसी की तरह हुआ था लेकिन समय के साथ केन्द्र एवं राज्य सरकारों द्वारा इसकी संस्तुतियों को मानने के बाद यह एक शक्तिशाली एवं निदेशक प्राधिकरण की तरह हो गया। आलोचक इसे 'सुपर मंत्रिमंडल' कहकर पुकराते हैं। इसके अलावा इसे 'आर्थिक मंत्रिमंडल' समानांतर मंत्रिमंडल एवं गाडी का पांचवा पहिया' कहकर भी पुकारा जाता है।[3]

***P.G. Department of Political Scince Ranchi University, Ranchi**

यह सुविदित तथ्य है कि योजना आयोग एक संविधानेतर संस्था के रूप में अस्तित्व में आया था। उन दिनों समाजवादी शासनंत्र मं पंचवर्षीय योजनाओं की अनिवार्यता प्रचलित थी। भारत ने भी योजना आयेाग बनाकर साम्यवादी राष्ट्रो को लुभाने तथा उनसे तकनीकी और आर्थिक सहायता व सहयोग प्राप्त करने की कोशिश की थी। साथ ही इसके परिणामस्वरूप भारत में पब्लिक सेक्टर के नवरत्नों का जन्म हुआ। किन्तु इस प्रकार जन्मी मिश्रित अर्थव्यवस्था के कारण भारतीय समाज एवं राजव्यवस्था में अनकानेक बुराइयों ने भी जन्म लिया। उदाहरण के लिए, सहकारिता आन्दोलन लालची नेताओं के भ्रष्ट इरादों तथा आचरण के कारण स्वार्थ साधन का माध्यम बन गया। इसके अतिरिक्त योजना आयोग की कार्यप्रणाली में उतरदायित्व और जवाबदेही का नितांत अभाव रहा।

उपरोक्त परिप्रेक्ष्य में प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने योजना आयोग को समाप्त करने का कदम उठाया।[4] 1950 के दशक में गठित योजना आयोग अब इतिहास के पन्नों में चला गया है। योजना आयोग के स्थान पर एक नई संस्था लाने के इरादे की घोषणा प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने 15 अगस्त 2014 को लाल किले की प्राचीर से राष्ट्र के नाम अपने सम्बोधन में कही थी। मंत्रिमंडल के एक प्रस्ताव के तहत यह नई सस्था 1 जनवरी 2015 से अस्तित्व में आ गई है। इस नई संस्था को'' राष्ट्रीय भारत परिवर्तन संस्थान'' नाम दिया गया है तथा आमतौर पर इसे 'नीति आयोग' के नाम से जाना जा रहा है। प्रधानमंत्री की अध्यक्षता वाला यह आयोग सरकार के थिंक टैंक (बौद्धिक संस्थान) के रूप में कार्य करेगा तथा केन्द्र सरकार के साथ साथ राज्य सरकारों के लिए भी नीति निर्माण करने वाले संस्थान की भूमिका यह निभाएगा। केन्द्र व राज्य सरकारों को राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय महत्व के महत्वपूर्ण मुद्दों पर रणनीति व तकनीकी सलाह भी यह देगा। पंचवर्षीय योजनाओं के भावी स्वरूप आदि के संबंध में सरकार को सलाह भी यह आयोग देगा।

सभी राज्यों के मुख्यमंत्रियों तथा केन्द्रशासित क्षेत्रों के उपराज्यपालों को नीति आयोग की अधिशासी परिषद में शामिल किया गया है। इस प्रकार नीति आयोग का स्वरूप योजना आयोग की तुलना में अधिक संधीय बनाया गया है।

प्रधानमंत्री की अध्यक्षता वाले इस आयोग में एक उपाध्यक्ष व एक मुख्य कार्यकारी अधिकारी (सीईओ) का प्रावधान किया गया है। अमरीका स्थित कोलम्बिया विश्वविद्यालय में कार्यरत रहे प्रो0 अरविंद पनगढिया को नवगठित आयोग का उपाध्यक्ष जहां बनाया गया वही योजना आयोग की सचिव रही सिंधुश्री खुल्लर को इसका सीईओ नियुक्त किया गया। 1975 बैच आईएएस अधिकारी सिंधुश्री खुल्लर अप्रैल 2012 से योजना आयोग की सचिव थी। इनके अतिरिक्त प्रसिद्ध अर्थशास्त्री विवेक देवराय व डीआरडीओ के पूर्व प्रमुख वी.के. सारस्वत नीति आयोग के पूर्णकालिक सदस्य बनाए गए, जबकि 4 केन्द्रीय मंत्री–राजनाथ सिंह, अरूण जेटली, सुरेश प्रभु तथा राधा मोहन सिंह इस आयोग

के पदेन सदस्य बनाए गए। विशेष आमंत्रियों के रूप में तीन केन्द्रीय मंत्रियों नितिन गडकरी, स्मृति ईरानी व थावरचंद गहलोत को इसमें शामिल किया गया। पूर्ववर्ती योजना आयेाग की सभी परिसम्पतियों व देनदारियाँ आदि नए नीति आयेाग के नाम सरकार ने कर दी है।[5]

केन्द्र में सरकार बनाने के बाद प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने योजना आयोग की तेरहवी कर दी है। जो लोग समझते है कि इस संस्था को समाजवाद के निर्माण के उदेश्य से स्थापित किया गया था इसमें किसी न किसी रूप में जनपक्षधर भूमिका की उम्मीद रखते हैं उनकी भूली आत्माएँ ऊँची आवाज में रूदन कर रही है। प्रिंट एवं इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में उनके बयानों, लेखों, टिप्पणियों आदि से उनके दुख का अंदाजा बखूबी लगाया जा सकता है इनका कहना है कि अपनी सारी कमियों और गलतियों के बावजूद योजना आयोग ने भारतीय अर्थव्यवस्था को कुछ हद तक भोजनाबद्ध करने और जनता को कुछ राहत पहुंचाने में जरूरी भूमिका निभायी है। अतः योजना आयोग को पूरी तरह खत्म करने के बजाय इसकी कमियों को दूर करना चाहिए था, ताकि भारतीय अर्थव्यवस्था को येाजनाबद्ध ढंग से चलाया जा सकता और जनता के हितों के मुताबिक भारतीय अर्थव्यवस्था को दिशा दी जा सकती।

कुछ भोले लोगों का मानना है कि आजाद भारत के पहले प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने सोवियत संघ से प्रभावित होकर, अपने सामाजवादी झुकाव के कारण योजना आयोग का गठन किया था। लेकिन वास्तव में 1950 में योजना आयोग के गठन के पीछे का मकसद न तो समाजवाद का निर्माण करना था और न ही इसने कभी जनपक्षधर भूमिका अदा की है। इसके खात्मे से भारत के पूंजीपति वर्ग के लिए अप्रासंगिक हो चुकी एक संस्था का ही खात्मा हुआ है।

सन 1947 में ब्रिटिश साम्राज्यवाद से राजनीतिक आजादी हासिल होने के बाद भारत के पूंजीपति वर्ग के पास देश की अर्थ सामन्ती अर्थव्यवस्था का तेजी से पूंजीवादी रूपान्तरण करने के लिए पर्याप्त पूंजी नहीं थी। अगर यह पूंजी साम्राज्यवादी देशों से ली जाती तो नयी हासिल हुई आजादी खतरे में पडती थी। इसके लिए जरूरी था कि सरकार जनता के पैसे से धातुओ, कोयले, रसायन, रेलवे व सडक, यातायात, बिजली आदि भारी उधोग खडे करके बनियादी ढांचे का निर्माण करे। उपभोग की वस्तुओं का उत्पादन निजी पूंजीपतियों के पास रहा। इस सरकारी और निजी क्षेत्र की मिली जुली अर्थव्यवस्था को मिश्रित अर्थव्यवस्था का नाम दिया गया। यह ऐसा वक्त था जब विश्वभर में कम्युनिस्टों के नेतृत्व में मजदूर वर्ग का आन्दोलन उभार पर था। रूस, चीन तथा पूर्वी भूरोप के कई देशों में मजदूर वर्ग के राज्य अस्तित्व में आ चुके थे। भारत के पूंजीपति वर्ग को भी हर पल मजदूर आन्दोलन का भय सता रहा था। ऐसी परिस्थिति में नेहरू के नेतृत्व में भारतीय पूंजीपति वर्ग ने जनता से, मिश्रित, अर्थव्यवस्था, के जरिए समाजवादी व्यवस्था

कायम करने का झूठा वायदा किया। जनकल्याण के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य, भोजन आदि में सरकारी निवेश करके कुछ सस्ती सहूलियतें उपलब्ध करवायी गयी। ऐसा मेहनतकश लोगों की चिन्ता से नहीं बल्कि जोंको की चिन्ता करते हुए जनता की क्रान्तिकारी आकाक्षाओं को ठण्डा करने के मकसद से किया गया था।

जवाहर लाल नेहरू के नेतृत्व में सोवियत संघ की तर्ज पर पंचवर्षीय योजनाएँ शुरू करने का मकसद भी समाजवाद का निर्माण नहीं था बल्कि पूंजीवादी व्यवस्था का निर्माण करना था। जनता को मूर्ख बनाने के लिए इसे समाजवाद कह दिया गया। पूंजीवादी व्यवस्था की योजनाबन्दी करने की कोशिशे असल में भारतीय हुक्कमरानों की असफल कोशिशे थी क्योंकि ऐसा हो पाना संभव नहीं था। योजना आयोग के जरिए जो कुछ हद तक योजनाबन्दी हो पाई उसका फायदा भी पूंजीपति वर्ग को हुआ। इस योजनाबन्दी का मकसद पूंजीपति के फायदे के लिए बुनियादी ढांचे का निर्माण एवं उन्हें स्त्रोत साधन उपलब्ध करवाने आदि से था। जनता की हातडतोड मेहनत से निर्मित सार्वजनिक क्षेत्र का वास्तविक फायदा पूंजीपति वर्ग को ही हो रहा था। यहां भी मजदूर वर्ग की भारी लूट हो रही थी। आगे चलकर भारत का पूंजीपति वर्ग अपने पैरों पर खडा हो गया, इसने मजबूती हासिल कर ली, तब नव उदारवाद के दौर में इस सार्वजनिक क्षेत्र के संस्थानों को कौडियों के मोल देशी विदेशी पूंजीपतियों को बेच भी दिया गया। इस तरह योजना आयेाग का काम कभी भी जनकल्याणकारी योजनाएं बनाना नहीं रहा।

भाकपा, माकपा जेसी नकली कम्युनिष्ट पार्टियों ने भी योजना आयेाग को भंग किये जाने का विरोध किया। ऐसा करते हुए ये पार्टियाँ पूंजीवादी अर्थवयवस्था के योजनाबद्ध ढंग से संचालित हो सकने, इस व्यवस्था की राजकीय मशीनरी के जरिए मेहनतकश जनता का भला हो सकने के भ्रम ही पैदा करती है। निजी मालिकाने पर आधारित पूंजीवादी व्यवस्था में उत्पादन और वितरण की योजनाबन्दी समूचे रूप में हो ही नहीं सकती। पूंजीवादी व्यवस्था में उत्पादन जनता की जरूरतो को केन्द्र में रखकर नहीं बल्कि मुनाफे को केन्द्र में रखकर होता है। पूंजीपतियों में अधिक से अधिक मुनाफा कमाने के लिए अन्धी होड होती है। विभिन्न पूंजीपति यह कभी पता नहीं लगा पाते कि किस चीज का कितना उत्पादन किया जाए कि पहले से (समाज में) कितना उत्पादन हो चुका है। होड के कारण वे साझे रूप से उत्पादन व वितरण की योजना नहीं बना सकते। इस समूची व्यवस्था का नतीजा अतिरिक्त उत्पादन के संकट में निकालता है। नजता की जरूरत की चीजें जिनमें पूंजीपतियों को मुनाफा नजर नहीं आता, उनकी कमी पैदा हो जाती है। इसिलए पूंजीपति अर्थव्यवस्था कभी भी योजनाबद्ध अर्थव्यवस्था नहीं हो सकती।

भारत को हुक्मरान भारतीय अर्थव्यवस्था को योजनाबद्ध ढंग से संचालित कर पाने में बुरी तरह नाकाम हुए है। इनकी पंचवर्षीय योजनाओं की भयंकर दुर्गति हुई है। इनकी योजनाएं भारतीय पूंजीवादी अर्थव्यवस्था को आर्थिक संकटों से कभी

भी बचा नहीं पायी है। मार्च 1950 में योजना आयोग की स्थापना हुई थी। 1960 के दशक में योजनाबन्दी का रेत का किला ढह चुका था। आगे चलाकर राजीव गांधी ने योजना आयोग को जोकरो का झुण्ड कहा था। 1990 के दशक की शुरूआत के साथ जब से पूंजीपति वर्ग की जरूरत के मुताबिक सार्वजनिक क्षेत्र का खात्मा किया जाने लगा तब से तो खासतौर पर योजना आयोग सरकार और पूंजीपति वर्ग पर बोझ बनकर रह गया था। अब भारतीय हुक्मरान समाजवाद का नकाब उतार चुके है। ऐसी हालत में योजना योजना आयोग को खत्म करने की तैयारियां तो भारतीय हुक्मरान लम्बे समय से कर रहे थे। कांग्रेस के नेतृत्व वाली यू.पी.ए–2 सरकार ने सडक परिवहन मंत्री कमलनाथ ने योजना आयोग की ''आराम की कुर्सी'' वाले सलाहकार कहकर निन्दा की थी। मोदी सरकार ने तो बस भारतीय पूंजीपति वर्ग की योजना आयोग को खत्म करने की कोशिशों को अंजाम तक पहुंचाया है।

दुसरी ओर समाजवादी व्यवस्था में उत्पदन के साधनों का मालिकाना मुख्यतया सामाजिक होता है। उत्पादन का मकसद जनता की जरूरतें पूरा करना होता है। इस व्यवस्था में उत्पादन व विवरण संबंधी योजनाबन्दी सम्भव होती है, इसलिए समाजवादी अर्थव्यवस्था ही योजनाबद्ध अर्थव्यवस्था हो सकती हैं।

इसका निचोड यह है कि योजना आयोग के खात्मे से भारत की मेहनतकश जनता ने कुछ नहीं गंवाया। यह भारत के पूंजीवादी हुक्मरानों ने अपनी जरूरत से बनाया था और अपनी ही जरूरत के लिए इसे खत्म किया है। इसके खात्मे से न तो कोई नुकसान होने लगा है और न ही जनकल्याण होने वाला है (जैसा कि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी का दावा है)।

पूंजीपतियों के मुनाफों की गारण्टी करने के लिए देश की मेहनतकश जनता और प्राकृतिक स्त्रोत संसाथनों की लूट के लिए भारतीय हुक्मरान पहले भी योजनाएं बनाते रहे है और आगे भी बनाते रहेंगे। योजना आयोग के होने या न होने से इसमें कोई फर्क नहीं पडने वाला। पूंजीवादी व्यवस्था को आर्थिक संकट से बचाने के लिए हुक्मरान पहले भी योजनाबन्दी की नाकाम कोशिशे करते रहे है और आगे भी करते रहेंगें। यह योजनाबन्दी पहले बन्द अर्थव्यवस्था के रूप में हो रही थी तो अब उदारवाद के रूप में हो रही है। न तो बन्द अर्थव्यवस्था ही इन्हे आर्थिक संकट से मुक्ति दिला पायी और न ही उदारवाद इनकी कोई मदद करेगा।[6]

लेकिन केन्द्र में सरकार बनाने के बाद योजना आयोग की जगह नीति आयोग बना चुके प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी आयोग के कामकाज से खुश नहीं है। नीति आयोग द्वारा कृषि क्षेत्र पर प्रधानमंत्री को सौंपी गई रिपोर्ट पर भी मोदी ने नाराजगी जताई है।[7] इसका अर्थ तो हम यही समझ सकते है कि स्वयं के निर्णय से ही मोदी खुश नहीं है। अतः होना तो यह चाहिए था कि योजना आयोग पहले से और मजबूत किया जाता। और इसे पूँजीपति वर्ग के नियंत्रण से दूर रखा जाता एवं पंचवर्षीय योजनाओं के कार्य को भी और सुधारा जाता। लेकिन ऐसा नहीं हुआ

और योजना आयोग को समाप्त कर दिया गया। इस निर्णय में और इस निर्णय की प्रक्रिया में न तो पारदर्शिता थी और न ही भागीदारी। इतने बडे निर्णय का औचित्य तय करने वाली कोई प्रामाणिक रिपोर्ट देश के लोगों के सामने नहीं आई। अतः अब यह जरूरी है कि योजना आयोग और पंचवर्षीय योजनाओं के महत्व पर परिवक्त चर्चा हो ताकि इनके महत्व को अधिक व्यापक स्तर पर समझा जाए। यदि देश में योजनाबद्ध विकास और पंचपर्षीय योजनाओं का दौर नए सिरे से आरंभ हो सके तो हमारे अल्पकालीन विकास और उससे भी अधिक दीर्घकालीन विकास को बहुत सहायता मिलेगी एवं समाजवाद की स्थापना होगी।[8]

इसके लिए आवश्यक था कि येाजना आयोग का जुडाव जनता से स्थापित किया जाये। विशेषकर सरकार के अलोचकों से, आयोग को नया नाम देने से कोई हल नहीं निकलेगा। उसमें कार्यरत कर्मचारी अदृश्य शक्तियों एवं कॉरपोरेट घरानों द्वारा चलाये जाने के आदी हो चुके थे। थिंक टैंक की भूमिका में भी ये इन्हीं शक्तियों द्वारा चलाये जा रहे है। आयोग अथवा थिंक टैंक में उस विषय से जुडे आलोचकों को स्थान मिले, तो सरकार का जनता से जुडाव होगा और तभी थिंक टैंक कामयाब होगा। इसके अतिरिक्त सरकार के वर्तमान चरित्र में बदलाव के लिए प्रधानमंत्री को मेरे दो सुझाव है–पहला, सीएजी की तर्ज पर सरकार के हर विभाग का सामाजिक ऑडिट कराने की स्वतंत्र संस्था स्थापित की जाये। देखा जाय कि विभाग ने अपनी जिम्मेवारी का कितना निर्वाह किया है लेकिन सीएजी की तरह यह संस्था स्वंय ऑडिट न करे। संस्था द्वारा ऑडिट कमेटी बनायी जाये, जिसमें जनप्रतिनिधि, शिक्षक, एनजीओ, वकील, पत्रकार और उस विभाग के उपभोक्ताओं को रखा जाये। इस कमेटी के लिए जनसुनवाई करना अनिवार्य हो। इससे अधिकारियों में जनता के प्रति नरमी आयेगी। दूसरा, सूचना के अधिकार की तरह 'जवाब का अधिकार' कानून बनाया जाये। आज यदि एक उपभोक्ता बिजली विभाग को ट्रांसफॉर्मर बड़ा करने को लिखता है, तो कोई जवाब नहीं मिलता है। अधिकारी के लिए अनिवार्य बना देना चाहिए कि वह जनता को बताये कि बडा ट्रांसफार्मर क्यों नहीं लगाया जा सकता है। ऐसी अनिवार्यता के कारण अधिकारी स्वयं ही जनता की बात सुनने लेगेंगें। विषय मात्र योजना आयोग का नहीं, बल्कि सरकारी विभागों का है। जनभागीदारी सुनिश्चित करनी चाहिए, तभी राष्ट्र में एकमत बनेगा और देश आगे बढेगा। इसके अतिरिक्त नीति आयोग की स्थापना से देश को कितना लाभ होगा, इसके लिए देश को इंतजार करना होगा।[9]

संदर्भ सूची

1. http://m.bharatdiscovery.org
2. सामान्य अध्ययन, 2011
3. एम.लक्ष्मीकांत, भारतीय की राजव्यवस्था, 2015
4. http://jayvijay.com, 15 Nov. 2014
5. प्रतियोगिता दर्पण, विशेषांक, 2016
6. मजदूर बिगुल, अक्टूबर 2014
7. www.patrika. com, 19 Jan 2016
8. www.navjivanindia.com, 29 aug 2019
9. www.oneindia.com 27 june 2018